THE TIMES OF INDIA

Date: 18-09-26

Tariff? Don't Panic

Threat of US action shouldn't put India off Russian oil, which has served us well, and moderated global prices

TOI Editorials

Both houses of US Congress have passed a bill that allows the president to impose up to 100% tariff on countries buying Russian oil and gas. As the second-largest buyer, should India be alarmed? No, because 1) Trump hasn't signed it yet; 2) his signing doesn't mean India is tariffed automatically; and 3)100% is the upper limit, not the default tariff. Some of the suspense will end soon because Trump has 10 days to sign or veto the bill that's taken 17 months to get this far. If he vetoes, end of the story. But what if he signs?

It's a big if because, while US can demand Russia's clients buy oil elsewhere, what are the alternatives? West Asian supplies are choked. Minus Russian energy, global prices will shoot up further, not sparing US consumers either. With less than two months to midterm polls, Trump doesn't want that. Already, farmers - who vote Republican- are sore because diesel prices have risen almost 70% in a year. This is harvest season for maize and soy, and filling up tractors and combines at $6.2 a gallon is hurting them.

Do Republicans, and Trump, want diesel to touch $8? So, Trump may hold off on applying tariff pressure on India. He also has to worry about inflation, which has forced US Fed to hike rates for the first time in three years. Costlier fuel will only stoke inflation, so the tariff might not materialise soon. Trump's so concerned about the diesel situation, he's even asked Zelenskyy to "stop knocking out diesel fuel in Russia".

-

India must prepare for the worst case-100% tariff - regardless. After all, US is our biggest export market. Does that mean buckling under pressure? No. As govt has said, energy security of 1.4bn Indians is its priority. So, Russian crude - which made up 51% of India's basket in July - isn't going anywhere. We have to worry about our own inflation. As for exports, Trump had exempted Indian pharma and some other Indian goods in his tariff war last year, and he might again now. We've done well by diversifying our markets. Analysts say instead of imposing a high tariff, Trump might use it to push India towards signing the long-delayed bilateral trade agreement. But is the BTA worth the pain of inflation, knowing how Trump has tariffed EU, Japan and South Korea after signing trade deals with them?

दैनिक भास्कर

Date: 18-09-26

अगर कृषि उत्पादन गिरा तो महंगाई रोकना कठिन होगा

संपादकीय

महाराष्ट्र में सूखे के कारण किसानों ने खड़ी सोयाबीन पर ही ट्रैक्टर चला दिया, क्योंकि वे इसे बनाए रखने में आने वाली अतिरिक्त लागत का बोझ नहीं उठा सकते थे। दूसरी तरफ यूपी के बुंदेलखंड में अतिवृष्टि से दलहन काफी हद तक बर्बाद हो चुका है। यानी कहीं अतिवृष्टि है तो कहीं अनावृष्टि । खरीफ में खेती का रकबा भी घट गया है। इससे रोजमर्रा की वस्तुओं के दाम और बढ़ेंगे। अल नीनो अपना दुष्प्रभाव दिखा रहा है। तभी तो खरीफ में खाद का काफी कम उठान हुआ है। किसान के पास खाद के लिए न तो पैसा है, और ना ही ये भरोसा है कि खाद में लगा पैसा फसल से वापस मिलेगा। देश की आबादी और करोड़ों पशुओं के चारे के लिए रोजाना क्रमशः 75 लाख और 25 लाख क्विंटल अनाज चाहिए। वर्तमान उत्पादन लगभग इस जरूरतभर का ही है। अक्टूबर में बैंक की मॉनिटरिंग पॉलिसी समिति की बैठक होने वाली है, जिसमें ब्याज दरें बढ़ाने पर फैसला लिया जा सकता है। रेपो रेट में परिवर्तन भी सम्भव है। सरकार की कोशिश होगी कि महंगाई रोकने के लिए बाजार में पैसा कम छोड़े ताकि खपत पर अंकुश लगे। लेकिन रोजमर्रा की वस्तुओं की खरीद बढ़ाना एमएसएमई सेक्टर को प्रोत्साहित करता है, जिससे रोजगार सृजन होता है। आरबीआई की कोशिश रहती है कि महंगाई को 4% से कम रखें, पर कृषि उत्पादन गिरा तो महंगाई रोकना मुश्किल होगा।

Date: 18-09-26

दक्षिण एशिया के कई देशों में बदलाव के स्वर उठ रहे हैं

शशि थरूर, (पूर्व केंद्रीय मंत्री और सांसद)

बीते पांच वर्षों में दक्षिण एशिया में युवाओं के नेतृत्व वाले 6 ऐसे सत्ता विरोधी आंदोलन देखे गए हैं, जिन्होंने इस क्षेत्र के राजनीतिक परिदृश्य को बुनियादी रूप से बदला है। इन आंदोलनों में कई समानताएं थीं- सभी में

युवा आकांक्षाओं की झलक थी ये डिजिटल रूप से संगठित थे, आर्थिक निराशा और सत्ता कुलीन वर्ग से मोहभंग दिखाई दिया था। लेकिन जिन राजनीतिक व्यवस्थाओं में ये आंदोलन हुए, उन्होंने इन असंतोषों को अलग-अलग तरीके से मैनेज किया। इसीलिए आंदोलनों के नतीजे भी अलग रहे।

इस कहानी की शुरुआत म्यांमार से होती है, जहां फरवरी 2021 में सेना ने लोकतांत्रिक तरीके से चुनी गई सरकार को सत्ता से हटा दिया और व्यापक विरोध- प्रदर्शन शुरू हो गए। नई सत्ता ने प्रदर्शनकारियों पर हिंसक कार्रवाई शुरू कर दी। लोकतंत्र की शांतिपूर्ण बहाली का रास्ता बंद हो जाने के बाद युवाओं के सामने सिविलियन डिफेंस फोर्स बनाने और जातीय सशस्त्र संगठनों के साथ मिलकर लड़ने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा। नतीजतन, गृहयुद्ध छिड़ गया।

मार्च 2022 में श्रीलंका का अरागालया आंदोलन आर्थिक बदहाली से पैदा हुआ। पेट्रोल पंपों पर ईंधन खत्म हो गया था, लंबे समय तक बिजली कटौती और आर्थिक दिवालिएपन की स्थिति ने राजपक्षे परिवार की सत्ता की वैधता खत्म कर दी। यह परिवार दो दशकों से देश की राजनीति पर हावी था। विरोध प्रदर्शन पूरे द्वीप में फैल गए और आखिरकार प्रदर्शनकारियों ने राष्ट्रपति भवन तक पर कब्जा कर लिया। लेकिन म्यांमार के विपरीत श्रीलंका में ज्यादा हिंसा नहीं हुई। राष्ट्रपति गोटाबाया राजपक्षे ने दबाव में इस्तीफा दे दिया।

पाकिस्तान में मई 2023 में पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान की गिरफ्तारी के बाद दंगे भड़क उठे थे। यह ऐसा मामला था, जिसमें एक लोकप्रिय नेता के पीछे एक जनवादी आंदोलन लामबंद होकर सेना के प्रभुत्व को चुनौती दे रहा था। जवाब में सेना तैनात की गई, इंटरनेट बंद कर दिया गया और विपक्ष के औपचारिक पार्टी स्ट्रक्चर को समाप्त कर दिया गया। बढ़ते राजनीतिक अलगाव की कीमत चुकाकर भी पाकिस्तान की 'हाइब्रिड' शासन व्यवस्था को बचाया गया।

बांग्लादेश में जुलाई 2024 का विद्रोह इस बात का उदाहरण था कि किस तरह एक सीमित नीतिगत विवाद- सरकारी नौकरियों में कोटा व्यवस्था के खिलाफ छात्रों का विरोध जनांदोलन में बदल सकता है। शेख हसीना की निरंकुश सरकार के खिलाफ आंदोलन बढ़ा तो कर्फ्यू लगा दिया गया, सेना तैनात हुई और उल्लंघन करने वालों को देखते ही गोली मारने के आदेश दे दिए। लेकिन जब सेना ने भी आदेश मानने से इनकार कर दिया तो हसीना देश छोड़कर भाग गईं और अंतरिम सरकार के गठन का रास्ता खुल गया।

नेपाल में सितम्बर 2025 के विरोध-प्रदर्शनों का निशाना कोई एक नेता नहीं, बल्कि पूरा राजनीतिक वर्ग था, जो एक दशक से प्रधानमंत्री की कुर्सी को लेकर 'म्यूजिकल चेयर' खेल रहा था। जबकि दूसरी ओर, युवा बेरोजगारी और अवसरों की कमी से जूझ रहे थे। सरकार द्वारा सोशल मीडिया पर लगाए बैन ने निराश जेन जी को भड़का दिया । नेपाली युवाओं ने वीपीएन और दूसरे एप्स का इस्तेमाल करते हुए बड़े पैमाने पर विरोध-प्रदर्शन किए। सरकार ने इसे बलपूर्वक दबाने की कोशिश की, लेकिन प्रदर्शनकारियों ने भी जवाबी प्रतिरोध किया और अंततः

संसदीय ढांचे को नष्ट किए बिना राजनीतिक कुलीन वर्ग को सत्ता से बाहर कर दिया। 35 वर्षीय युवा को प्रधानमंत्री चुना गया।

और अंततः गत जुलाई में भारत में भी विद्यार्थियों के नेतृत्व वाले व्यापक विरोध-प्रदर्शन हुए। शुरुआत प्रवेश परीक्षाओं में पेपर लीक के मसले से हुई और फिर रोजगारविहीन आर्थिक वृद्धि को लेकर बढ़ती बेचैन ने इसे व्यापक बना दिया। लेकिन भारत में इस आंदोलन ने संवैधानिक व्यवस्था के लिए खतरा बनने के बजाय उलटे उसकी मजबूती को ही प्रदर्शित किया। सरकार ने अहम रियायतें दीं, शिक्षा मंत्री का इस्तीफा स्वीकार किया और प्रशासनिक तथा नीतिगत सुधारों का प्रस्ताव रखा, ताकि विरोध की ऊर्जा को फिर से स्थापित लोकतांत्रिक माध्यमों की ओर मोड़ा जा सके।

हाइपर - कनेक्टिविटी और आर्थिक-राजनीतिक अलगाव का कॉम्बिनेशन ताकतवर होता है। डिजिटल दुनिया में पली-बढ़ी युवा पीढ़ी स्थापित ढांचों को बायपास करते हुए बड़े पैमाने पर लोगों को एकत्र कर सकती है। पिछली पीढ़ियों के मुकाबले युवा प्रदर्शनकारी इस भावना से अधिक प्रेरित हैं कि उनके पास खोने के लिए कुछ नहीं। वे सरकारी रियायतों से प्रभावित नहीं होते और दमन का सीधे सामना करते हैं। इनकी अनदेखी नहीं की जा सकती।

दैनिक जागरण

Date: 18-09-26

अमेरिका की मनमानी

संपादकीय

आखिरकार अमेरिकी प्रतिनिधि सभा ने भी रूस से तेल आयात करने वाले भारत समेत पांच प्रमुख देशों पर सौ प्रतिशत टैरिफ लगाने वाले बिल को स्वीकृति दे दी। इससे पहले सीनेट भी इस विधेयक को मंजूरी दे चुकी है। यदि अमेरिकी राष्ट्रपति इस पर हस्ताक्षर कर देते हैं तो भारत, चीन के अतिरिक्त हंगरी, स्लोवाकिया और अजरबैजान पर अमेरिकी टैरिफ और अधिक बढ़ जाएगा। देखना है कि यह सौ प्रतिशत होता है या उससे कम ? देखना यह भी है कि अमेरिकी राष्ट्रपति इस विधेयक पर हस्ताक्षर करते हैं। अथवा उसे रूस से तेल खरीदने वाले देशों को केवल दबाव में लेने का जरिया बनाना चाहते हैं। जो भी हो, यदि अमेरिका भारत पर मनमाने तरीके से टैरिफ लगाता है तो अपने अहंकार का ही परिचय देगा। अमेरिकी राष्ट्रपति और उक्त विधेयक का समर्थन करने वाले पक्ष-विपक्ष के सांसदों का यह मानना है कि रूस से तेल खरीदने वाले देशों को टैरिफ के जरिये दंडित करने

से वह यूक्रेन के खिलाफ अपना युद्ध जारी रखने में असमर्थ हो जाएगा। यह सही है कि रूस यूक्रेन के खिलाफ एक अंतहीन और एक तरह से निरर्थक लड़ाई लड़ रहा है, लेकिन यह कहना समस्या का सरलीकरण ही है कि यह युद्ध भारत, चीन जैसे देशों के कारण जारी है। क्या यह विचित्र नहीं कि अमेरिका अपने ही द्वारा ईरान के खिलाफ छेड़े गए युद्ध को तो रोक नहीं पा रहा है और भारत, चीन आदि पर इसका दोष मढ़ रहा है कि वे यूक्रेन के खिलाफ युद्ध जारी रखने में रूस की सहायता कर रहे हैं?

यह अच्छा हुआ कि भारत ने अमेरिका की मनमानी का परिचय देने वाले विधेयक पर दो टूक कहा कि वह अपने ऊर्जा हितों की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध है। भारत ने यह कहने में भी संकोच नहीं किया कि वह अपने आर्थिक हितों की रक्षा के लिए हरसंभव उपाय करेगा। इसका संकेत यही है कि यदि अमेरिका रूस से तेल खरीदने के कारण भारत पर सचमुच टैरिफ बढ़ाता है तो उसे इसका जवाब भी दिया जाएगा। यह संभव नहीं कि अमेरिका मनमानी करता रहे और भारत चुपचाप उसे सहता रहे। यदि अमेरिका ने अपना रवैया नहीं बदला तो भारत के साथ उसके संबंध और अधिक बिगड़ने तय हैं। यह भी संभव है कि अमेरिका के साथ होने वाला व्यापार समझौता अंतिम रूप न ले सके। अमेरिका को यह समझना होगा कि ताली एक हाथ से नहीं बजती। यदि वह भारत से संबंध सुधारना चाहता है तो उसे मित्रवत व्यवहार करना होगा। उसे इसका भी आभास होना चाहिए कि यदि भारत रूस से तेल खरीदना बंद कर दे तो एक तो उसके ऊर्जा हित खतरे में पड़ जाएंगे और दूसरे अंतरराष्ट्रीय बाजार में तेल के दाम और अधिक बढ़ जाएंगे। ध्यान रहे पश्चिम एशिया संकट के कारण ये पहले से ही बढ़े हुए हैं और यह संकट अमेरिका ने ही खड़ा किया है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 18-09-26

अमेरिका में दर बढ़ोतरी

संपादकीय

अमेरिका के केंद्रीय बैंक फेडरल रिजर्व की व्याज दर निर्धारण समिति फेडरल ओपन मार्केट कमेटी (एफओएमसी) ने बुधवार को व्याज दर 0.25 प्रतिशत बढ़ाकर 3.75 से 4.0 प्रतिशत करने का ऐलान किया। हालांकि, इस पिछले तीन वर्षों में हुई इस पहली बढ़ोत्तरी से पूर्व ही वित्तीय बाजार लगभग यह मान चुका था कि ब्याज दरें बढ़ने वाली हैं।

लिहाजा, इस फैसले से किसी को हैरानी नहीं हुई। एफओएमसी ने यह निर्णय सर्वसम्मति से जरूर लिया मगर इस घटनाक्रम को दुनिया के सबसे अहम केंद्रीय बैंक का नेतृत्व करने में वॉश की स्वायत्तता स्थापित करने की दिशा में एक कदम के रूप में देखा जा सकता है। कुछ महीने पहले उनकी नियुक्ति पर कई लोगों ने दह जताया था और सवाल उठाया था कि क्या वह व्याज दरों पर राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप की बात मानेंगे। ट्रंप लंबे समय से कम ब्याज दरों की वकालत करते रहे हैं। हालांकि, इस बार उन्होंने फेडरल रिजर्व के निर्णय की आलोचना नहीं की मगर उनकी टिप्पणियों से वॉश के लिए हालात शायद ही आसान रहने वाले हैं। ट्रंप ने कहा कि उन्होंने पॉश से कहा था कि वह फेडरल रिजर्व के साथ मतदान कर सकते हैं क्योंकि इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा। ट्रंप ने कहा कि बोर्ड का रवैया बहुत सख्त है।

ब्याज दरें बढ़ाए जाने की अटकल काफी समय से चल रही थी। पश्चिम एशिया में बढ़ती अनिश्चितताओं और ऊर्जा की बढ़ती कीमतों के कारण मुद्रास्फीति से जुड़े हालात और खराब हो गए हैं। वैसे भी, अमेरिका में मुद्रास्फीति दर पांच वर्षों से भी अधिक समय से 2 प्रतिशत लक्ष्य से ऊपर बनी हुई है और माना जा रहा है कि नीतिगत दरें और बढ़ेंगी। फेडरल रिजर्व द्वारा व्याज दर में बदलाव आम तौर पर केवल एक बढ़ोतरी तक सीमित नहीं रहता। दिलचस्प है कि वॉश ने दर बढ़ाने के निर्णय के बाद संवाददाता सम्मेलन में कहा कि फेडरल रिजर्व उदार रुख से थोड़ा पीछे हट गया है। हालांकि, उन्होंने इस प्रश्न का जवाब नहीं दिया कि क्या दर अब तटस्थ स्तर के करीब है। उन्होंने कहा कि यह एक सैद्धांतिक मामला है। तटस्थ दर यह वास्तविक व्याज दर है जो न तो उदार और न ही सखा होती है। बुधवार को जारी फेडरल रिजर्व के बोर्ड के सदस्यों के आर्थिक अनुमानों से पता चला कि इस वर्ष ब्याज दरों में एक और बढ़ोत्तरी हो सकती है और अगले वर्ष भी मुद्रास्फीति दर लक्ष्य से ऊपर रह सकती है। हालांकि, अमेरिका में मुद्रास्फीति की समस्या पश्चिम एशिया में उत्पन्न संकट से पहले ही खड़ी हो गई थी मगर भविष्य में ब्याज दरों पर क्या कदम उठाए जाएंगे यह बात कुछ हद तक उस क्षेत्र में होने वाली घटनाओं पर निर्भर करेगी। यह बात भी उतनी ही अहम है कि मुद्रास्फीति के खिलाफ इस लड़ाई में फेडरल रिजर्व अकेला नहीं है। पिछले सप्ताह यूरोपीय केंद्रीय बैंक (ईसीबी) ने इस वर्ष दूसरी बार व्याज दरें बढ़ा दीं। माना जा रहा है कि बैंक ऑफ जापान (बीओजी) भी शुक्रवार को कुछ ऐसा ही करेगा। येन काफी दबाव में है इसलिए दुनिया भर की नजरें भी ओजो के फैसले पर टिकी होगी।

जब दुनिया भर में ब्याज दरें बढ़ती हैं तो तेजी से उभर रही अर्थव्यवस्थाओं के लिए व्यापक आर्थिक हालात संभालना मुश्किल हो जाता है। इसका कारण यह है कि वे घरेलू बचत के साथ-साथ विदेशी पूंजी पर भी निर्भर रहती हैं। विकसित अर्थव्यवस्थाओं खासकर अमेरिका में ब्याज दरें बढ़ने से पूंजी की आमद कम हो सकती है और वैश्विक वित्तीय हालात जटिल हो जाते हैं। फेडरल रिजर्व के कदम उठाने से पहले ही ब्याज दरें काफी बदल चुकी हैं। पश्चिम एशिया संकट की शुरुआत के बाद 10 वर्ष की अवधि के अमेरिकी सरकारी बॉन्ड पर बोल्ड लगभग एक प्रतिशत अंक बढ़ गई है इसके पीछे केवल ती मुद्रास्फीति ही एकमात्र कारण नहीं है। सरकार और निजी क्षेत्र, खासकर आर्टिफिशल इंटेलिजेंस (एआई) से ताल्लुक रखने वाली कंपनियों की तरफ से पूंजी की मांग यील्ड को ऊपर भगा रही है। इन सब बातों से रुपये पर काफी दबाव पड़ा है। भुगतान संतुलन के संकट की

आशंका देखते हुए भारत ने रियायती स्वैप योजना के तहत रकम जुटाने की पहल की है। इस पर मिली प्रतिक्रिया उत्साहजनक रही है मगर भारतीय रिजर्व बैंक के लिए बेहतर होगा कि वह इस आरक्षित रकम का समझदारी से इस्तेमाल करे। वैश्विक अनिश्चितता और ब्याज दरें कुछ समय तक ऊंचे स्तर पर बनी रह सकती हैं। मुद्रास्फीति के अनुमान भी भारत में मौद्रिक नीति सख्त करने के लिए दबाव बढ़ा रहे हैं जिससे वील्ड में अंतर सुधर सकता है। हालांकि, वर्तमान वैश्विक हालात देखते हुए यह स्थिति पर्याप्त पूंजी आकर्षित करने के लिए नाकाफी हो सकती है।

जनसत्ता

Date: 18-09-26

मनमानी का रास्ता

संपादकीय

कुछ समय की नरमी के बाद अमेरिका ने एक बार फिर से आर्थिक मोर्चे पर अपनी मनमानी का रुख अख्तियार कर लिया लगता है। हालांकि यह समझना मुश्किल है कि मौजूदा भू-राजनीतिक दौर में जब दुनिया बहुध्रुवीय हो रही है, अमेरिका आखिर क्यों यह चाहता है कि कोई देश उसके प्रभाव में खुद को समेट कर रखे और दूसरी ओर न देखे, भले ही इस क्रम में उसे अमेरिका पर पूरी तरह निर्भर होना पड़े। यह बेवजह नहीं है कि उसकी मनमर्जी को ज्यों का त्यों स्वीकार करने के बजाय कुछ देश अब अपना वैकल्पिक रास्ता भी तैयार रखना चाहते हैं। भारत भी वैसे देशों में एक है, जिसे अमेरिका ने पिछले साल शुल्क दरें बढ़ा कर अपने प्रभाव में लाने और वहीं सीमित रखने की कोशिश की थी, लेकिन भारत ने अपने विवेक का सहारा लेकर वैकल्पिक मोर्चे तैयार रखे और इसी वजह से उसे विपरीत हालात से निपटने में मदद भी मिली। मगर यह भी सच है कि जिन चुनौतियों से सहजता के साथ निपटा जा सकता है, ऐसी स्थिति में उनसे पार पाने में अतिरिक्त ऊर्जा और संसाधन खर्च करने की जरूरत पड़ती है।

गौरतलब है कि अमेरिका ने रूस से तेल खरीदने वाले देशों पर सौ फीसद शुल्क लगाने की ओर कदम बढ़ाए हैं। दरअसल, राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप को रूस पर प्रतिबंध लगाने के साथ-साथ भारत और चीन जैसे उसके तेल एवं गैस के व्यापारिक साझेदार देशों पर भारी शुल्क लगाने का अधिकार देने के लिए अमेरिकी प्रतिनिधि सभा ने 'लिंडसे ओ ग्राहम सैंक्शनिंग रूस एंड ईरान एक्ट आफ 2026 विधेयक पारित किया है। अमेरिकी सीनेट इसे पिछले महीने ही पारित कर चुकी है। ट्रंप अगर इस पर हस्ताक्षर कर देते हैं, तो उसके बाद यह कानून बन

जाएगा। यानी ट्रंप के हाथ अब एक ऐसा हथियार है, जिसके जरिए वे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जब चाहें, शुल्क युद्ध शुरू कर सकते हैं या उसे किसी खास देश की अपने प्रभाव में लाने के लिए इस्तेमाल में ला सकते हैं। पिछले साल अगस्त में भी अमेरिका ने रूस से तेल खरीदने के सवाल पर भारत पर पचास फीसद तक का शुल्क लगा दिया था, लेकिन एक व्यापारिक समझौते के तहत अतिरिक्त शुल्क को फरवरी 2026 में हटा लिया गया था।

अब फिर से इस बात की आशंका खड़ी हो रही है कि अमेरिका में अगर यह कानून अमल में आ जाता है, तो वह रूस से तेल खरीद के सवाल पर भारत और चीन पर नए सिरे से शुल्क लगाने और अपनी मनमानी थोपने की कोशिश कर सकता है। हालांकि भारत ने इस बार यह स्पष्ट कर दिया है कि वह अमेरिका की मनमर्जी के प्रभाव में आने के बजाय अपने नागरिकों की ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए पूरी तरह प्रतिबद्ध है और अपने व्यापार तथा आर्थिक हितों की रक्षा के लिए सभी जरूरी कदम उठाएगा। विदेश मंत्रालय के मुताबिक, भारत स्रोतों में विविधता लाने और बदलती बाजार परिस्थितियों के मुताबिक अपनी ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करता रहेगा। पिछले कुछ सालों के दौरान रूस से कच्चे तेल की खरीद में भारत ने काफी बढ़ोतरी की है। जाहिर है, शुल्क लगाने की धमकी देकर अमेरिका अगर भारत को दायरे में समेटने की कोशिश कर रहा है, तो नई परिस्थितियों में शायद यह मुश्किल होगा। खासतौर पर नई दिल्ली में ब्रिक्स सम्मेलन के बाद भारत के सामने संभावनाएं और विकल्प के नए रास्ते खुल रहे हैं। ऐसे में बेहतर हो कि अमेरिका अपनी शुल्क नीति के सहारे टकराव के नए मोर्चे खोलने के बजाय अंतरराष्ट्रीय सहयोग का साझीदार बने।

Live हिन्दुस्तान.com

Date: 18-09-26

भारत से अन्याय

संपादकीय

अमेरिका ने अगर भारत सहित पांच देशों पर 100 प्रतिशत टैरिफ लगा दिया, तो इससे तनाव का बढ़ना तय है। अमेरिकी संसद ने इस टैरिफ को मंजूर कर लिया है और अब यह अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के हाथ में है कि वह कब इसे लागू करते हैं। वैसे, इस टैरिफ का भारत पर सीधे बड़ा असर नहीं पड़ेगा, पर छोटे असर से इनकार नहीं किया जा सकता। कुछ अमेरिकी नेताओं की सीधी धमकी के बावजूद भारत की दृढ़ता प्रशंसनीय है। भारत ने दोटूक कहा है कि वह अपने व्यापार व आर्थिक हितों की रक्षा के लिए हर जरूरी कदम उठाएगा। भारत

अपनी 1.4 अरब आबादी की ऊर्जा सुरक्षा के लिए दृढ़ है। कहना ही चाहिए कि पश्चिम एशिया में अमेरिका ने जब से संकट बढ़ाया है, तभी से भारत तेल आयात के लिए रूस पर ज्यादा निर्भर हो गया है। बीती जुलाई में भारत के कच्चे तेल के कुल आयात का 51.1 प्रतिशत रूस से आया। इतना तेल हमें यूएई, सऊदी अरब, वेनेजुएला, ब्राजील, ओमान और अमेरिका मिलकर भी नहीं देते हैं। ऐसे में, भारत से यह कहना सरासर नाइंसाफी है कि वह रूस के अलावा कहीं और से तेल खरीदे।

अमेरिका ने भारत के साथ ही चीन, स्लोवाकिया, हंगरी और अजरबैजान को भी निशाना बनाया है। इन देशों पर सौ प्रतिशत का विशेष शुल्क लगाने के लिए जो 'सैंक्शनिंग रशिया ऐंड ईरान ऐक्ट 2026' पारित किया गया है, उसकी सिर्फ निंदा हो सकती है। भारत की तरह ही चीन ने भी ताजा अमेरिकी कदम को गलत बताया है। चीन ने रूस से तेल व गैस की खरीद पर शुल्क लगाने को अमेरिकी अधिकार क्षेत्र से बाहर का कदम बताते हुए कहा है कि किसी तीसरे देश द्वारा हस्तक्षेप या दबाव नहीं डाला जाना चाहिए। चीन संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की मंजूरी बगैर किसी भी ऐसी कार्रवाई का उचित ही विरोध कर रहा है, पर अफसोस, वह टैरिफ संबंधी अमेरिकी मनमानी को रोक नहीं पाया। वैसे ध्यान रहे, चीन प्रतिबंध के बावजूद ईरान से भी तेल खरीदता रहा है। उसके लिए रूस से तेल खरीदना बहुत आसान है। दोनों देशों की सीमाएं मिलती हैं और पाइपलाइन से आपूर्ति होती है। यह सोचने की बात है कि अमेरिका ने चीन के खिलाफ भी कानून पारित किया है, पर वह भारत के खिलाफ ज्यादा तल्ख है।

यही समय है, जब भारत को अपनी अर्थव्यवस्था के बचाव में संकल्पित रहना होगा। अमेरिका टैरिफ की धमकी का इस्तेमाल भारत पर दबाव डालने के लिए कर सकता है। इसके जरिये वह चाहेगा कि भारत अब रूस से तेल का आयात न करे और साथ ही, एक असंतुलित व्यापार समझौते लिए तैयार हो जाए। यह सर्वविदित तथ्य है, भारत का अमेरिका के लिए निर्यात तुलनात्मक रूप से ज्यादा है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि भारत जान-बूझकर ऐसे महंगे और गैर-जरूरी आयात को बढ़ाए, जिससे बुनियादी रूप से देश, देशी उत्पादकों व किसानों को चौतरफा नुकसान हो। अमेरिका को धमकी देने की जरूरत तभी पड़ रही है, जब वह भारत से बहुत कुछ अतिरिक्त रूप से मांग रहा है। आने वाले दिनों में अपने लिए जबरन व्यापार संतुलन या व्यापारिक लाभ सुनिश्चित करने की अमेरिकी रणनीति से सावधान रहना होगा। भारत कोई ऐसा छोटा देश नहीं है, जो अपनी आर्थिक नीतियों-रणनीतियों- सौदों-समझौतों को अमेरिका के हित में लगातार बदलते हुए अपना नुकसान करता रहे। भारतीय अर्थव्यवस्था अपने निर्णायक मोड़ पर है, यहां अपने हितों से कोई समझौता संभव नहीं है। अपनी दृढ़ता के दम पर ही हमें आर्थिक संपन्नता की राह पर बढ़ना है।

Date: 18-09-26

अमेरिकी टैरिफ से डरने की जरूरत नहीं

यामिनी अग्रवाल, (प्रोफेसर,भारतीय वित्त संस्थान)

जिस बात के कयास लगाए जा रहे थे. आखिरकार वही हुआ। अमेरिकी प्रतिनिधि सभा से रूस और ईरान पर प्रतिबंध लगाने वाले 'लिंडसे ग्राहम सैंक्शनिंग रशिया ऐड ईरान ऐक्ट' को मंजूर कर लिया है। वहां की सीनेट, यानी ऊपरी सदन पहले ही इसे भारी बहुमत से पारित कर चुकी है। अब राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के हस्ताक्षर करते ही यह बिल कानून की शक्ल ले लेगा।

इसमें अमेरिकी प्रशासन को यह अधिकार दिया गया है कि रूस और ईरान से तेल व गैस खरीदने वाले देशों पर वह 100 फीसदी तक टैरिफ लगा सकता है। हालांकि, किस देश पर कितना टैरिफ लगेगा, इसमें यह स्पष्ट नहीं किया गया है, लेकिन माना जा रहा है कि रूस से बड़ी मात्रा में तेल-गैस खरीदने के कारण भारत भी इसकी चपेट में आ सकता है। तथ्य भी यही है कि बदलते भू-राजनीतिक दबावों के बावजूद हम अपने कुल आयात का लगभग 50 फीसदी कच्चा तेल मॉस्को से मंगवा रहे हैं।

हालांकि, वह पहली बार नहीं है, जब टैरिफ का दांव खेला गया है। 2025 की जनवरी में सत्ता संभालने के तुरंत बाद से ही राष्ट्रपति ट्रंप टैरिफ की धमकी देने लगे थे। एक वक्त तो उन्होंने 'दंडस्वरूप' नई दिल्ली पर अतिरिक्त 25 फीसदी टैरिफ लगाने का एलान भी कर दिया था। हालांकि, इसको घटाकर वह 10 फीसदी कर चुके हैं, जिसका असर हमारी अर्थव्यवस्था से कहीं अधिक खुद अमेरिकी आर्थिकी पर पड़ रहा है।

पूर्व में अमेरिका ने कई अन्य देशों पर भी टैरिफ लगाए हैं, जिनसे उसके अपने बाजार में उत्पादों की कीमतें बढ़ गई हैं। यहां महंगाई इतनी अधिक है कि लोग हलकान हैं। इसी कारण वहां के संघीय बैंक ने दरों को बढ़ाने का एलान किया है, ताकि बढ़ती कीमतों को कुछ हद तक काबू में किया जा सके। मगर टैरिफ संबंधी नया बिल अमेरिका की मुश्किलें और बढ़ा सकता है। तमाम देशों पर टैरिफ लगाकर वह अपने आयात बिल महंगा कर लेता है, जिससे उसकी अपनी अर्थव्यवस्था को नुकसान होता है। वहां मंदी जैसे हालात बनने लगते हैं।

रही बात भारत की, तो निस्संदेह अमेरिका हमारा एक बड़ा कारोबारी साझेदार है, लेकिन टैरिफ के जरिये वह हम पर दबाव नहीं बना सकता। पाठकों को याद होगा, पहले भी जब उसने यह शुल्क थोपने का एलान किया था, तब फार्मास्यूटिकल्स जैसे क्षेत्रों को अछूता छोड़ दिया था, जो खास तौर पर उसकी जरूरत की चीज है। बाकी जिन वस्तुओं पर टैरिफ लगे थे, उनमें से कई वे उत्पाद थे, जो महंगे बिकते ही हैं और अधिक कीमत ही उनको मूल्यवान बनाती है। इनमें रत्न और आभूषण जैसे उत्पाद गिने जाते हैं। चूंकि ये लग्जरी आइटम हैं, इसलिए इन पर टैरिफ लगने से कारोबारियों को कोई नुकसान नहीं होता ।

हां, कुछ उत्पादों पर टैरिफ का असर जरूर पड़ता है, क्योंकि उन्हें अन्य देशों से प्रतिस्पर्द्धा करके अपना बाजार बनाना पड़ता है। वे देश, जिन पर टैरिफ नहीं लगा होता या कम होता है, इन उत्पादों को तुलनात्मक रूप से सस्ती कीमत पर बेच सकते हैं। हालांकि, इस मामले में भी भारत के लिए राहत की बात यह है कि प्रतिस्पद्ध

देशों पर लगे टैरिफ हमसे ज्यादा हैं। नतीजतन, कई उत्पाद अब भी तुलनात्मक रूप से सस्ते ही हैं। दूसरी बात, डॉलर के मुकाबले रुपये की गिरती कीमत भी हमें फायदा पहुंचाती है। इससे अमेरिका को होने वाले भारतीय निर्वात में प्रतिस्पद्ध करने की क्षमता बढ़ जाती है, क्योंकि अमेरिकी बाजार में भारतीय सामान सस्ते हो जाते हैं।

इतना ही नहीं, भारत ने यूरोपीय संघ ही नहीं, कई देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौता (एफटीए) किया है। साथ ही, हाल ही में संपन्न ब्रिक्स सम्मेलन से इसने खुद को वैश्विक नेतृत्व की भूमिका में स्थापित किया है। इन सबसे दुनिया भर में भारत की कारोबारी स्थिति सुधरी है। वह एक मजबूत व्यापारिक साझेदार के रूप में स्थापित हुआ है। गौरतलब बात यह भी है कि भारत वस्तु उत्पादन के मामले में प्रतिस्पद्धां नहीं करता। हम 'सर्विस इकोनॉमी', यानी सेवा प्रदान करने वाली अर्थव्यवस्था माने जाते हैं। इसका फायदा भी हमें इस 'टैरिफ चाल' को काटने में मिलता है।

सुखद यह भी है कि भारत की अर्थव्यवस्था काफी मजबूत है। यहां सकल घरेलू उत्पाद में निजी उपभोक्ता व्यय की हिस्सेदारी करीब 60 फीसदी है, जिसका सीधा अर्थ है कि भारतीय अर्थव्यवस्था मुख्यतः घरेलू मांग और जनता द्वारा किए जाने वाले खर्च पर निर्भर है। बाकी हिस्सेदारी सरकारी खर्च और निवेश की है। इस कारण भारतीयों की अर्थव्यवस्था में मजबूत दखल बनी हुई है और टैरिफ जैसा कोई डर इसे परेशान नहीं करता।

इसीलिए इस तर्क में दम नहीं दिखता कि मध्यम वर्ग पर अमेरिका के हालिया कदम का कोई खास असर पड़ेगा। बेशक, यह यह वर्ग है, जो बाहर जाकर पढ़ने या काम करने की ख्वाहिश रखता है, लेकिन घरेलू मांग पर निर्भरता और आंतरिक खपत भारतीय अर्थव्यवस्था को नई ऊंचाई देती है। शेयर बाजार के निष्प्रभावी बने रहने की बात भी इसी वजह से कही जा रही है।

यह बात भी ध्यान में रखने की है कि दुनिया भर के निवेशक अब भारत को एक भरोसेमंद बाजार मानने लगे हैं। यह एक ऐसा देश है, जो काफी मजबूत है। यहां राजनीतिक स्थिरता है और माहौल भी उनके अनुकूल है। यहां जिस तरह का डिजिटल ढांचा या जैसी मानव पूंजी है, इसका फायदा भारत को मिलता रहा है और आगे भी मिलता रहेगा। निवेश मूलतः 'रिटर्न' के भरोसे पर किया जाता है। जहां निवेशकों को यह भरोसा मिलता है, वे वहीं निवेश करते हैं। इस मामले में भारत आज कई देशों से आगे खड़ा नजर आ रहा है।

इस स्थिति में अगर अमेरिका टैरिफ लगाता है, तो हम पर ज्यादा असर नहीं डाल पाएगा। मुमकिन है, हमारे कुछ उत्पाद उन देशों के माध्यम से अमेरिका पहुंचने लगें, जो टैरिफ से बाहर हैं। 184 देश आपस में व्यापार कर रहे हैं और इनमें से कई देशों में इस तरह के 'ट्रांजिट रूट' हैं। भारतीय कंपनियां इनका लाभ उठा सकती हैं, जिसका सीधा मतलब है कि व्यापार पूर्ववत होता रहेगा। अमेरिका के लिए इस तरह के रास्ते क देश पहले ही ढूंढ़ चुके हैं।

कुल मिलाकर, अमेरिका के हालिया कदम से बहुत घबराने की जरूरत नहीं है। यकीनन, वह हमारा बड़ा साझेदार बना रहेगा और हमारी अर्थव्यवस्था भी अपनी गति आगे बढ़ती रहेगी। हां, कुछ उत्पादों पर असर पड़ सकता है, लेकिन कंपनियों के दीर्घकालिक हितों को बहुत ज्यादा नुकसान नहीं होगा।

Date: 18-09-26

एआई से हमें बहुत फायदा होगा या भारी नुकसान

प्रांजल शर्मा, (डिजिटल नीति विशेषज्ञ)

मानव सभ्यता की विकास यात्रा में कई अहम मोड़ आए हैं। इन सभी मोड़ों से इंसान को जोखिम और फायदे, दोनों ही मिले। कुछ ने तो सभ्यता का रुख ही बदल डाला। आग और विद्युत की खोज ऐसे ही मोड़ थी । आज मानव समाज एक ऐसे निर्णायक मोड़ पर खड़ा है, जहां आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) इतना विकसित हो गया है कि यह हमारी तरक्की में मदद कर सकता है या हमारे भविष्य को नुकसान पहुंचा सकता है।

हालांकि, आग, बिजली और एआई में बड़ा फर्क है। एआई में इंसानी दखल के बिना फैसले लेने, राय बनाने और काम शुरू करने की क्षमता विकसित हो रही है। यह क्षमता इसे एक शानदार, मगर खतरनाक तकनीक बनाती है। एआई पहले से ही हमारे ईमेल, रिसर्च और कारोबारी- निजी फैसलों को प्रभावितकर रहा है। जैसे, किसरेस्टोरेंट में खाना है, कौन से कपड़े खरीदने है, कौन सी फिल्म देखनी है, यहां तक कि निजी रिश्तों को कैसे संभालना है, इसके सुझाव भी वही दे रहा है। ऐसे में, अगर वह इंसानी नियंत्रण, या दिशा- निर्देश के बिना कोई कदम उठाने लगे,तो दुनिया भर में अफरा-तफरी तबाही मच सकती है। एंथोपिक (एआई कंपनी) के पूर्व रिसर्चर जैकब कॉक्सन द्वारा दी गई एक गंभीर चेतावनी ने इस संदर्भ में जोरदार बहस छेड़ दी है। कॉक्सन का कहना है कि 'एआई लैब सुपर इंटेलिजेंस बनाने की होड़ में हमारी जिंदगी के साथ जुआ खेल रही हैं, क्योंकि इनको यकीन है कि इस दशक के अंत तक एआई सबको खत्म कर सकता है।' कॉक्सन की यह चेतावनी बहुत अहम मोड़ पर आई है। एआई क्षेत्र की बड़ी हस्तियां अब इस बात पर सहमत हो रही हैं कि फ्रंटियर एआई के विकास की रफ्तार को शायद नियंत्रित करने की जरूरत है, ताकि सुरक्षा उपाय इसके साथ-साथ हो सकें।

एंथ्रोपिक के सीईओ हारियो अमोदेई ने वी मस्ट पेस द फ्रंटियर शीर्षक लेख में लिखा है 'इसमें दांव बहुत ऊंचे हैं, इसलिए रफ्तार को नियंत्रित करने की प्रक्रिया के मामले में हमें समझदारी दिखानी चाहिए।' ओपनएआई के सीईओ सैम ऑल्टमैन ने भी इसका समर्थन करते हुए कहा है कि अमेरिका में प्रतिस्पर्द्धा का दबाव कितना भी क्यों न हो, इसमें लापरवाही को सही नहीं ठहराया जा सकता और न ही ऐसा होना चाहिए कि एआई क्षमताएं 'अलाइनमेंट' और निगरानी से आगे निकल जाएं।' टेस्ला के एलन मस्क और गूगल डीपमाइंड के प्रमुख डेमिस

हसाबिस ने भी अनोदेई का समर्थन किया। हालांकि, कुछ टेक विशेषज्ञों का मानना है कि ये आशंकाएं बढ़ा-चढ़ाकर बताई जा रही हैं।

बहरहाल एआई के खतरों पर बहस आज की सबसे अहम चर्चाओं में से एक बन गई है। इस बहस का मुख्य बिंदु यह है कि क्या इसके नुकसान संभावित फायदों से ज्यादा होंगे और समाज को इन खतरों को कैसे संभालना चाहिए? इसके कुछ बड़े खतरे पहले से मौजूद हैं। मसलन, गलत जानकारी का फैलना, एल्गोरिदम में पक्षपात, निजता का उल्लंघन, साइबर हमले और ऑटोमेशन की वजह से रोजगार का छिनना आदि। आलोचकों का कहना हैकि अगर एआई सिस्टम को पक्षपाती डाटा पर प्रशिक्षित किया जाए, तो वे मौजूदा सामाजिक विषमताओको और बढ़ा सकते हैं। उन्नत एआई टूल ऐसी नकली सामग्रियां बना सकती हैं, जिससे लोगों के लिए सच और झूठ के बीच फर्क करना मुश्किल हो जाएगा।

कुछ रिसर्चरों का तर्क है कि बहुत उन्नत एआई ऐसे लक्ष्य अपना सकते हैं, जो इंसानी मूल्यों के अनुरूप न हों, जिससे वैश्विक स्तर पर खतरे पैदा हो सकते हैं। उनकी दलील है कि टेक्नोलॉजी को एक साधन होना चाहिए, न कि निर्णायक शक्ति | सरकारों व समाज को टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल अपने फायदे के लिए करने में सक्षम होना चाहिए, न कि उनके अधीन हो जाना चाहिए।

जाहिर है, टेक्नोलॉजी कैसे काम करती है, इसे समझना तेजी से महत्वपूर्ण होता जा रहा है। बेहतर डिजिटल साक्षरता लोगों को गलत सूचनाओं, एल्गोरिदम संबंधी पूर्वाग्रहों की निगरानी में नदद करती है। ऐसे में, एक जागरूक जनता स्वचालित प्रणालियों द्वारा लिए गए फैसलों पर सवाल उठाने और रोजगार, स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा आदि महत्वपूर्ण पहलुओं पर स्पष्टीकरण मांगने के लिए बेहतर ढंग से तैयार हो सकेगी।